एम॰ एस॰ कॉलेज जहानाबाद
विभाग हिन्दी
विषय :- 'चन्द्रगुप्त' नाटक
शिक्षण - पार्ट एक
समय - 11.00 to 12.00, 21.5.20
शिक्षक - डॉ॰ रमेश शर्मा

पाठ - 'चन्द्रगुप्त की कथावस्तु'

छात्र-छात्राओं!

कल हमलोग 'चन्द्रगुप्त' के कथानक पर विचार कर रहे थे। इस प्रसंग कथानक का विस्तार अभिनेयता में बाधा तो डालता ही है नाटक का उद्देश्य भी पूरा नहीं हो पाता है। आज का विवेच्य विषय है 'कथानक विस्तार' का एक महत्वपूर्ण कारण नाटककार द्वारा भारतीय और पाश्चात्य दोनों तरह की नाट्य शैलियों का प्रयोग करना है। एक तरह भारतीय और पाश्चात्य नाट्य-शैलियों के बीच नाटककार ने समन्वय स्थापित करने की चेष्टा की है।

जैसा कि प्रसाद जी के बारे स्पष्ट मान्यता है कि वे मूलतः कवि रहे हैं, इतर्थ उन्होंने अपने रोमैंटिक दृष्टिकोण के कारण अपने नाटकों का नया विन्यास किया। इस कारण चन्द्रगुप्त में विश्रृंखल संघटन हुआ है। यह संघटन विश्रृंखलता रोमैंटिक नाटकों की पहचान है। इसलिए इस नाटक में व्यष्टि और समष्टि की समन्वित चेतना का दिग्दर्शन होता है, पर इसमें चित्रित सांस्कृतिक विचारों, देश-प्रेम, स्त्री-पुरुष की प्रणय-लीला में रोमैंटिक आवेग और आदर्श दोनों की स्थापना के कारण कथानक विस्तार पा गया है। भारतीय नाटक में चूंकि 'रस' को प्रमुखता दी जाती है तथा पाश्चात्य नाटकों द्वन्द्व को प्रधानता दी जाती है इसलिए इन दोनों नाट्य-शैलियों में समन्वय की चेष्टा के कारण प्रसाद जी ने अपने नाटकों में वीर और शृंगार की सुन्दर अभिव्यक्ति भी की, तो द्वन्द्व दिखलाने के लिए नायक में तथा दूसरे पात्रों संघर्ष तथा एक ही पात्र में अनेक वृत्तियों का द्वन्द्व की सृष्टि की है। वीरोचित भावों के कारण चन्द्रगुप्त का कार्नेलिया, मालविका कल्याणी में कोई सहज रुचि नहीं है, पर कार्नेलिया के प्रति उसकी अनुरक्ति नाटककार इसलिए

घूर्णित करता है उससे उसका विवाह कराता है।

नाट्य-शैलियों में समन्वय के कारण यहाँ नाटककार ने भारतीय प्रणाली के विरुद्ध पर्वतेश्वर, कल्याणी आदि की हत्या-आत्महत्या के दृश्य भी आयोजित किये हैं तो पाश्चात्य नाट्य-शिल्प संकलन त्रय की उपेक्षा करके पाश्चात्य नियमों का उल्लंघन किया है। इस कारण भी कथानक अत्यधिक विस्तार पा गया है। पाश्चात्य और भारतीय दोनों नाट्य-शैलियों के समन्वय की चेष्टा में प्रसाद जी ने अपने नाटकों में नूतन विषय को उपस्थित करना अपना लक्ष्य बना लेते हैं। इस नूतन विषय की रचना में वे भारतीय आत्मा को सुरक्षित रखने का संकल्प स्वीकार करते हैं तो पारसी ढंग के नाटकों की भाँति पद्यात्मक संवाद और गीत रखते हैं तथा बंगला नाटकों की तरह लम्बे-लम्बे कथोपकथन एवं स्वगत कथन (जो स्वगत भाषण के रूप इनके नाटकों में दीखते हैं।) स्वीकार करते हैं। इस तरह कुछ यहाँ का कुछ वहाँ वस्तु संयोजन नाटक के कथानक को अनावश्यक बोझिल बना डालता है।

यहाँ ध्यातव्य यह भी है कि भारतीय और पाश्चात्य नाट्य-शिल्पों के समन्वय और प्रयोग के कारण प्रसादजी ने 'जहाँ समय की प्रगति के प्रति उदारता एवं समन्वय बुद्धि दिखलायी है वहीं अपने देश के प्राण की सुरक्षा में वे सफलता पूर्वक तत्पर दिखाई पड़ते हैं।' ये पंक्तियाँ डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के हैं। नाटक में गीतों के प्रयोग की बहुलता को लेकर भी जगन्नाथ प्रसाद शर्मा मानते हैं कि ये पारसी नाटकों का ही प्रभाव है, पर मुझे लगता है कि प्रसाद जी मूलतः कवि थे, अतः उनके नाटकों में भी काव्यत्व बलात फूट पड़ता है। उनके हृदय का भावोच्छ्वास नाटक के गीतों में ही नहीं, उनके गद्यांशों में भी झलकता है।

यहाँ सुवासिनी का यह कथन द्रष्टव्य है — "अकस्मात् जीवन-कानन में, एक राका-रजनी की छाया में छिपकर मधुर वसन्त घुस आता है। शरीर की सब क्यारियाँ हरी-भरी हो जाती हैं। सौन्दर्य का कोकिल-'कौन'? कहकर सबको रोकने-टोकने लगता है, पुकारने लगता है। राजकुमारी! फिर उसी के प्रेम का मुकुल

लगा जाता है। और-भरी स्मृतियाँ मकरन्द-सी उसमें छिपी रहती है।" — (चन्द्रगुप्त पृ०- 170)

सुवासिनी के हृदय का यह उच्छ्वास कार्नेलिया के सामने नाटक के चौथे अंक के नवम् दृश्य में अभिव्यक्त हुआ है। यह वास्तव में पद्यमय गद्य है। जयशंकर प्रसाद जैसे कवि नाटककार के लिए स्वाभाविक भावनात्मक उच्छ्वास है। यही कारण ही है कि नाटक में जब भी अवसर मिलता है गीत फूट पड़ते हैं। नाटकीय दृष्टि से यह कितना उपयुक्त है यह तो अलग विषय है, पर प्रसाद जी पर पारसी रंगमंच और बंगला के नाटकों का प्रभाव को नकारने के लिए काफी है।

(signature)
21.5.20.